मैथिली-मन्दिर प्रकाशन, दरभंगा

हनुमानबाहुक

तुलसीदास



रामदेव झा

TULASIDASA

HANUMANABAHUKA

मैथिली-रूपान्तरकार— श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'

गोस्वामी तुलसीदास कृत

हनुमानबाहुक

[डा० श्रीमधुसूदन ठाकुर कृत हिन्दी-गद्यानुवाद समन्वित]

●

मैथिली पद्यानुवादक

श्री सुरेन्द्र झा 'सुमन'

अध्यक्ष, मैथिली विभाग (मिथिला विश्वविद्यालय)

रामरमा

●

श्रावण शुक्ला ७ मी; : तुलसी-शताब्दी–१९७३

संस्करण प्रेरक-

डा० मधुसूदन ठाकुर

भू० पू० अंग्रेजी व्याख्याता, पटना विश्वविद्यालय

सांस्कृतिक प्राध्यापक, विश्वविद्यालय, कनाडा

अंग्रेजी संस्करण (डा० ठाकुर)

मूल्य–भारतमे ३.०० : नेपालमे ४-(N.c.)

ब्रिटेनमे 10 शिलिंग : अमेरिका-कनाडा S1.25c

मैथिली संस्करण (१९७३)

'सुमन'

मूल्य : २.००

प्रकाशक--मैथिली मन्दिर; दरभंगा

मुद्रक-- मिथिला प्रेस, दरभंगा

आवरण कलाकार--श्रीनृपेन्द्र राय

निवेद्य

संत-कवि अथवा कवि-संत दूनू क्रम-विशेषण जनिकामे उपर्युपरि, गोस्वामी पदें जनिक जितेन्द्रियता अथवा वाग्वश्यता सिद्ध - प्रसिद्ध, नामानुकूल तुलसीक पवित्रता जनिकामे युक्त-उपयुक्त, दास्यभावें जनिक 'दास' नामांत नितांत सदर्थ-अन्वर्थ--हुनकहि रचना थिक 'हनुमान-बाहुक'। हनुमानक बाहुक आश्रयसँ बाहुक पीडा कोना पड़ायल से ध्वनित होइछ सन्तकविक ध्वनिमे--'सपथ महावीरकी जो रहै पीड़ बाँहकी ?

जिज्ञासा उठि सकैछ जे निष्काम भक्तिपथक अनन्य पथिक गोस्वामी जी कोना रोगपीड़ा दूर करबाक कामें बाहुकक स्तुति-छन्दक प्रयोग कयल। किन्तु जे शरीरकें मन्दिर मानि, ओहिमे आराध्यकें प्रतिष्ठापित कयने छथि हुनका हेतु रोग-रागक मालिन्य मन्दिरमे रहय देबो कोना सह्यय ? तें सकाम रहितहुँ निष्कामे।

पार्थिव तुलसीदलक परससँ जखन असत्य अनुच्चरित होइछ, शुष्क तुलसीक शाखाखंडक कणिकामाला धारणहिसँ जखन हिंसा निवृत्त होइछ, तखन अध्यात्मिक तुलसीक स्तवनवचनें रोग-ताप पाप-कलापक सत्ता कतय ? श्रद्धालुक आस्था-अनुभूति स्वतः प्रमाणित अछि--'भवति रसना मात्र विषयः'। मधु-माखनक स्वाद निर्वचनें नहि रसनेसँ भेटैछ--वर्ण', संकेतें एकर शाब्दबोध नहि कराओल जा सकैछ।

'यावद् गंगा च गोदा च' वा 'यावत् सिन्धुहिमालयौ' अथवा 'यावच्चन्द्र-दिवाकरौ' छथि एवं भारतीय धर्म-संस्कृति ज्ञान उपासना ओ विचारधाराक सत्ता इयत्ता अछि, रामकृष्णक नाम, शंकर हनुमानक ध्यान चलिते रहत एवं तुलसीक सम्मान होइते रहत। तुलसी कोनो युगक, कोनो सत्ता विशेषक अथवा कोनो वर्ग सम्प्रदायक नहि छथि। ई तं

'याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधात् शाश्वतीभ्यः समाभ्यः' शाश्वत मन्त्रद्रष्टा ओ चिरन्तन भावस्रष्टा ऋषि कवि मान्य छथि। हुनकहि अन्तिम जीवन-खण्डक वेदनाद्रवित ई उद्गार हनुमानबाहुक मे निहित अछि जकर मैथिलीमे रूपान्तरित करबाक सहसा साहसी भेलहुँ। प्राचीन कविगुरु कालिदास-भारवि-माघहुक रचनाक अनुगान कयल अछि, आधुनिक कवीन्द्रहुक सुरमे सुर मिलाओल अछि किन्तु गोस्वामीजीक पद-स्पर्श करबामे भाव-कम्पित छी। बाहु गहथु स्वयं बाहुककार अथवा हुनक रचनामंजरीक कोनो श्याम अभि **राम भमरा**, वा उनटि पुनटि सबतरि **राम भमरा** देखनिहार कोनो **'कवीश्वर-कपीश्वरौ'** !

तुलसीशताब्दीक पावन वर्ष। एक दिन अकस्मात् मधुसूदन ठाकुर (आश्रम सिहवाड़ा जे देश-विदेशक उच्चतर विश्वविद्यालयमे 'अधीतमध्यापितमर्जितं यशः' चरितार्थ कयने छथि, हनुमानबाहुकक स्वयंरचित अंग्रेजी संस्करण दय, प्रसंगवश मैथिलियहुमे रूपान्तरित करबाक प्रेरणा देल। मनहिमन काँपि उठलहुँ; किन्तु नकारि नहि सकलहुँ। जेना तेना अनुरोध पालन कयल। की केहन भेल, से हम स्वयं नहि जनैत छी; जनैतछी एतबे जे एहिमे जतबा क्षण लागल से भगवत्कृपाक प्रसादवत् पावन प्रतीत भेल। हम एतबे कहय चाहैत छी, एतबे कहियो सकैत छी —

'तत्तदखिलं देव त्वदाराधनम्'।

--सुरेन्द्र झा 'सुमन'
(मिथिला-विश्वविद्यालय)
दरभंगा : श्रावण शुक्ला ७मी

हनुमान बाहुक

मूल (अवधी)—गो० तुलसीदास

रूपान्तर (मैथिली)—'सुमन'

(१)

सिंधु-तरन सिय-सोच-हरन रवि बाल-बरन तनु ।
भुज बिसाल मूरति कराल कालहु को काल जनु ॥
गहन - दहन - निरदहन - लंक निःसंक बंकभुव ।
जातुधान - बलवान - मान - मद - दवन पवनसुव ॥
कह तुलसिदास सेवत सुलभ सेवक हित संतत निकट ।
गुन गनत नमत सुमिरत जपत समन सकल संकट विकट ॥

समुद्र को पार करनेवाले, सीता के शोक को हरनेवाले, बाल सूर्य के रङ्ग के शरीरवाले, लम्बी भुजाओं वाले, जिनकी मूर्त्ति ऐसी भयङ्कर है जैसे काल के भी काल हों, अशोक वाटिका का नाश करने वाले, लङ्का को जलानेवाले, निडर, टेढ़ी भौंहोंवाले पवनपुत्र हनुमान बलवान राक्षसों का मानमद चूर करनेवाले हैं। तुलसीदास कहते हैं कि ये सेवा करने से सहज में प्राप्त होते हैं और सदा अपने सेवकों की भलाई करने को प्रस्तुत रहते हैं। इनका गुणगान, नमस्कार, स्मरण और जप सारे कठिन संकटों को दूर करता है ।

(२)

[१]

करइत सागर पार, हरल
सिय हिय दुख भारे ।
तरुन तरनि सन अरुन
वरन तन पवनकुमारे ॥
भुज विशाल रूपहु कराल
जनि काल क काले ।
डाहि वंक लंकहु भुवंक
निर्भय जग - जाले ॥

गर्व खर्व उद्धत खल क
करइत नित जनहित प्रगट ।
जय कपि ! जपि जनि नाम गुन
पद भुकि संकट विकट हट ॥

स्वर्ण - सैल - संकास कोटि - रवि - तरुन - तेज - घन ।
उर विसाल भुजदंड चंड नख बज्र बज्र तन ॥
पिंग नयन भृकुटी कराल रसना दसनानन ।
कपिस केस करकस लँगूर खल - दल - बल - भानन ॥
कह तुलसिदास बस जासु उर मारुतसुत मूरति बिकट ।
सन्ताप पाप तेहि पुरुष कहँ सपनेहुँ नहिं आवत निकट ॥

सोने के पहाड़ जैसे शरीर से करोड़ों तरुण सूर्य का तेज प्रकट हो रहा है. इनकी छाती चौड़ी है, भुजदण्ड प्रचण्ड हैं, नाखून तथा शरीर बज्र के समान हैं, आँखें पीली, भौंहें डरावनी हैं, जीभ, दाँत, और मुख सभी भयङ्कर हैं, बाल भूरे हैं, पूँछ बड़ी मजबूत है, दुर्जनों के समूह का बल तोड़नेवाली है। तुलसीदास कहते हैं कि हनुमान की ऐसी भयङ्कर मूर्त्ति जिसके हृदय में बसती है, दुःख और पाप उसके पास स्वप्न में भी नहीं फटकते।

[२]

गिरि सुमेरु सन शुचि सुवरन
अगनित रवि छवि घन ।
उर उदार, भुज युग विशाल
नख चोख कुलिश तन ॥
बिदित पिंग दृग विकट भृकुटि
मुख जीह दंत द्युति ।
रुच्छ पुच्छ कपि कपिश केश
खल दल ज्वाला हुति ॥

पुजि तुलसी शुचि सुमन जे
धरथि ध्यान हनुमान पद ।
तनि लग नहि सपनहु खनहु
पाप ताप भय दुख बिपद ॥

(३)

पंचमुख छमुख भृगुमुख्य भट,
असुर - सुर - सर्व - सरि समरत्थसूरो।
बाँकुरो बीर बिरुदैत बिरुदावली,
बेद बन्दी बदत पैज पूरो॥
जासु गुन गाथ रघुनाथ कह जासु बल
बिपुल जल भरित जग जलधि झूरो।
दीन दुख दमन को कौन तुलसीस है,
पवन को पूत रजपूत रूरो॥

शिव, कार्त्तिकेय, भृगुकुल के प्रधान भट परशुराम, राक्षस और देवता आदि वीरों में हनुमान समर्थ वीर हैं। वे बड़े बाँके वीर प्रसिद्ध यशवाले हैं। वेद और बन्दी कहते हैं कि वे प्रतिज्ञा पूरी करने वाले हैं। जिनकी गुणगाथा श्रीराम ने स्वयं कही है, वे हनुमान बल के समुद्र रूप हैं और संसार रूपी समुद्र बलरूपी जल से सूखा है। दीनों के दुख दमन करने वाले तुलसी के स्वामी कौन हैं? पवनपुत्र सुन्दर राजपुत्र हनुमान ही हैं।

[३]

शिव पंचानन षण्मुख
सुरक प्रमुख सेनानी ।
भृगु - कुल - कमल - पतंग
परशुधर, असुर गुमानी ॥
क्यौ केहनहु भट विकट
भिड़थु बल नदी तरंगे ।
बिन्दु बनल जत सिन्धु
विदित बल वचन अभंगे ॥

श्रुति वंदी गाबथि विरुद
साखी परतख रघुकुमर ।
तनि सन के खल दल दलन
पवन - पूत रजपूत वर ।

भानु सो पढ़न हनुमान गये भानु मन,
अनुमानि सिसु केलि कियो फेरफार सो।
पाछिले पगनि गम गगन मगन मन,
क्रम को न भ्रम कपि-बालक-बिहार सो॥
कौतुक बिलोकि सुरपाल हरि हर बिधि,
लोचननि चकाचौंधी चित्तनि खँभार सो।
बल कैधों बीररस धीरज कै साहस कै,
तुलसी सरीर धरे सबनि को सार सो॥

हनुमान बाल्यकाल में सूर्य से विद्या पढ़ने गये। सूर्य ने मन में सोचा; यह हमारे साथ कैसे चलकर पढ़ सकेगा भला! हनुमान खिलवाड़ से उलटी चाल चलने लगे। आकाश में प्रसन्नता से पीछे के बल चले। उन्हें बिना किसी भ्रम के ऐसा कौतुक करते देख इन्द्र, विष्णु, शिव और ब्रह्मा के नेत्रों में चकाचौंध आने लगी और चित्त में घबड़ाहट हो गई। तुलसी दास कहते हैं कि वे सब कहने लगे— क्या यह मूर्त्तिमान बल है, वीर-रस है, धीरज है, साहस है या सब के सार ने शरीर धारण किया है ?

झानुमान सँ पढ़य चलल
पवमान - कुमारे ।
बुझि अबूझ शिशु टारि चलल
नभ पथ रथ चारे ॥
रवि गुरु दिस रुख राखि
समुख मुख पद पछुआरे ।
भ्रमहु न गति क्रम कमल
छकित दिगपति लखि द्वारे ॥

बल धैरज साहस सभक
सार सहज साकार ई ।
तेज ओजहिक खोज हित
द्रुत परिणत गति शक्ति की ?

[५]

भारत में पारथ के रथकेतु कपिराज,
गज्यो सुनि कुरुराजदल हलबल भो।
कह्यो द्रोन भीषम समीरसुत महाबीर,
बीर रस बारिनिधि जाको बल जल भो॥
बानर सुभाय बालकेलि भूमि भानु लगि,
फलँग फलाँग हू तें घाटि नभतल भो।
नाइ-नाइ माथ जोरि-जोरि हाथ जोधा जोहैं,
हनुमान देखे जगजीवन को फल भो॥

महाभारत के युद्ध में अर्जुन के रथ की पताका पर हनुमान आ विराजे। उनकी गरज सुन कर कौरव सेना में खलबली मच गई। द्रोण और भीष्म ने कहा, पवनतनय हनुमान बड़े बलवान हैं, जिनका बल युद्धरूपी सागर का जल है। वानर-स्वभावसे पृथ्वी से लेकर सूर्य तक कूदने में आकाश एक फलाँग से भी कम हुआ। योद्धा लोग हाथ जोड़ जोड़कर और सिर झुका-झुका कर हनुमान का दर्शन करते हैं और कहते हैं, "हनुमान के दर्शन से हमारा जन्म लेना सफल हुआ"।

[५]

महा-भारतक युद्ध, क्षुब्ध
कौरव दल उद्धत ।
सुनि अर्जुन-रथ केतु कपिक
गर्जन सभ कंपित ॥
भीष्म द्रोन सभ कोन दाबि
कहि रहल देखु भल ।
रन रस घन आसार,
वीरता वारिधि कपि बल ॥

महिमा महि मे जान सब
उछलि गगन रवि पथ चढ़ल ।
छथि हनुमान महान बुझि
नत-शिर लह सब जनम फल ॥

रामदेव झा

गोपद पयोधि करि होलिका ज्यों लाय लंक,
निपट निसंक पर पुर गलबल भो।
द्रोन सो पहार लियो ख्याल ही उखारि कर,
कंदुक ज्यों कपि खेल-बेल कैसो फल भो।
संकट समाज असमंजस में रामराज,
काज जुग पूगनि को करतल पल भो।
साहसी समत्थ तुलसी को नाह जाकी बाँह,
लोकपाल पालन को फिरि थिर थल भो॥

समुद्र को पार कर लङ्का को होली की तरह जला डाला, राक्षसों के नगर में भी खलबली मच गई, फिर भी हनुमान निर्भय, निःशंक ही रहे। द्रोण के समान भारी पहाड़ खिलवाड़ में ही उखाड़ गेंद के समान हाथ में ले लिया जैसे बेल का फल हो। सारा वानर समाज संकट में पड़ा था और स्वयं राजा राम दुबिधा में थे, ऐसे समय में युगों का काम हनुमान के हाथ पल भर में पूरा हुआ। ऐसे साहसी और समर्थ हनुमान तुलसी के स्वामी हैं, जिनके बल से लोकपालों का पालन हुआ और पृथ्वी फिर स्थिर हुई।

गो - खुरहि क परिमान
महासागर जनिका लय ।
कनकमयी लंका क
होलिका दाह छनहि कय ॥
हलचल देल मचाय
बेल कंदुक लहु क्रीड़ा ।
द्रोणाचलहु उठाय
हरल रघुवीर क पीड़ा ॥

युग क काज साधल पलहि
भुज बल साहस सिद्ध जे ।
लोकपाल पद थापि थल
नाथ त्रिलोक प्रसिद्ध से ॥

(१२)

कमठ की पीठि जाके गोड़नि की गाड़ै मानो,
नाप के भाजन भरि जलनिधि जल भो।
जातुधान दानव परावन को दुर्ग भयो,
महामीनबास तिमि-तोमनि को थल भो॥
कुम्भकर्न रावन पयोदनाद इंधन को,
तुलसी प्रताप जाको प्रबल अनल भो।
भीषम कहत मेरे अनुमान हनुमान,
सारिखो त्रिलोक न त्रिकाल महाबल भो॥

हनुमान के कूदने से कच्छप की पीठ में ऐसा भारी गढ़ा हो गया जैसे समुद्र का जल नापने का पात्र हो। राक्षसों के भाग कर शरण लेने का वह दुर्ग बना और बड़ी भारी मछलियों के समुदाय का घर बन गया। तुलसीदास कहते हैं कि हनुमान का प्रबल प्रताप कुम्भकर्ण, रावण और मेघनाद रूपी इंधन के लिए आग है। भीष्म कहते हैं कि मेरे अनुमान में तीनों लोक और तीनों काल में हनुमान के समान बलवान कोई नहीं हुआ।

कमठ पीठ पद चाप धसल
जल सिन्धु नपायल ।
जनि भय दानव दल पड़ाय
जल दुर्ग नुकायल ॥
महामीन बसि गेल,
तिमिंगिल दलहुक अंगन ।
जनि प्रताप बडवानल
रावन दल - बल इंधन ॥

आन न क्यौ हनुमान सन
त्रिजग त्रिकालहु शक्तिधर ।
वृद्ध भीष्म अनुभवि कहल
कपि केतुक भारत समर ॥

[८]

दूत रामराय को सपूत पूत पौन को तू,
अंजनी को नन्दन प्रताप भूरि भानु सो ।
सीय सोच समन दुरित दोष दमन,
सरन आये अवन लखन प्रिय प्रान सो ॥
दसमुख दुसह दरिद्र दरिबे को भयो,
प्रगत त्रिलोक ओक तुलसी निधान सो ।
ज्ञान गुनवान बलवान सेवा सावधान,
साहेब सुजान उर आनु हनुमान सो ॥

रामदूत. पवन के सुपुत्र, अपनी माता अंजनी को आनन्द देनेवाले, अनेकों सूर्य के प्रताप वाले, सीता के सोच को शान्त करने'वाले, दोषों को नष्ट करने वाले, शरण में आए हुए के रक्षक, लक्ष्मण को प्राणों से प्रिय, रावणरूपी दुसह दरिद्रता का दलन करने वाले, गुणवान, बलवान, ज्ञानवान, सेवा में सावधान, ऐसे हनुमान जैसे चतुर स्वामी का ध्यान करो ।

रघुवीर क जे दूत, पूत
जग विदित समीर क ।
अंजनी क नंदन, वन चन्दन
मलय समीर क ॥
तेज निधान भानु जनु,
सिय दुख तिमिर क चाने ।
दशमुख दनुज तृन क
दल दहन कृशानु प्रमाने ॥

शरण अशरण क, त्रिभुवन क
त्राण, लछमण क प्राण पुर ।
बल वैभव गुन ज्ञान धुर,
धरु हनुमान क ध्यान उर ॥

[९]

दवन दुवन दल भुवन बिदित बल,
वेद जस गावत बिबुध बंदीछोर को ॥
पाप ताप तिमिर तुहिन विघटन पटु,
सेवक सरोरुह सुखद भानु भोर को ॥
लोक परलोक तें बिसोक सपने न सोक,
तुलसी के हिये है भरोसो एक ओर को ॥
राम को दुलारो दास वामदेव को निवास,
नाम कलि कामतरु केसरी किसोर को ॥

राक्षसदल का दमन करने वाले हनुमान का बल सारे संसार में प्रकट है। देवताओं को कैद से छुड़ाने वाले हनुमान का यश वेद गाते हैं। पाप और ताप रूपी अंधकार और शीत का नाश करने में आप निपुण हैं, और सेवक रूपी कमल को सुख देने के लिए आप बाल सूर्य के समान हैं। लोक परलोक में शोक-रहित करने वाले आप अपने भक्तों को स्वप्न में भी शोक नहीं होने देते। तुलसीदास को एक ही भरोसा है कि श्रीराम के प्रिय दास, शिव के अंश, केशरी के पुत्र का नाम कलियुग में कामतरु है, इच्छानुसार फल देने वाला है।

दानव - दल क दलन बल
विदित भुवन हनुमाने ।
बंदी देव क बंधन
मोचल, वेद प्रमाने ॥
पाप ताप तम टारि
पीड़ पाला गलाय कत ।
सेवक हृदय सरोज ओज भरि
भोर भानु मत ॥

तनि भरोस तुलसी क नित
सफल लोक परलोक करु ।
रामदूत प्रिय पवन-सुत
शिव स्वरूप कलि कामतरु ॥

महाबलसींव महाभीम महाबानइत,
महाबीर बिदित बरायो रघुबीर को ॥
कुलिस कठोर तनु जोर परै रोर रन,
करुना - कलित मन धारमिक धीर को ॥
दुर्जन को काल सो कराल पाल सज्जन को,
सुमिरे हरनहार तुलसी की पीर को ॥
सीय सुखदायक दुलारो रघुनायक को,
सेवक सहायक हैं साहसी समीर को ॥

हनुमान बल की सीमा हैं, बड़े भयङ्कर हैं, बड़े वीरों के बाना वाले हैं, श्रीराम के चुने हुए प्रसिद्ध महाबलवान योद्धा हैं। समर में जोर पड़ने पर वज्र जैसा कठोर शरीर खलबली मचा देता है। धर्म में धीर हनुमान के हृदय में करुणा शोभित है। दुष्टोंके लिए वह काल से भी भयङ्कर हैं और सज्जनों का पालन करने करने वाले हैं। सीता को सुख देने वाले, श्रीराम पवनपुत्र हनुमान सेवकों के सहायक हैं।

[१०]

महावली अति भीम भयानक
वीर बहादुर ।
पुनि बिछि अपनाओल अपनहि
रघुवर जनि रनधुर ॥
बज्र शरीर, गर्जनहि रिपु रन
घोल मचाबथि ।
पुनि करुणाकर धर्मशील
उर धीरज लाबथि ॥

खल हित काल कराल कटु
सुजन क कोमल पालके ।
सिय हित, प्रभुप्रिय, भक्तरत
सुमिरी पवन क बालके ॥

रचिबे को बिधि जैसे पालिबे को हरि हर,
मीच मारिबे को ज्यायबे को सुधापान भो ॥
धारिबे को धरनि तरनि तम दलिबे को,
सोखिबे कृसानु पोषिबे को हिमभानु भो ॥
दल दुख दोषिबे को जन परितोषिबे को,
माँगिबो मलीनता को मोदक सुदान भो ॥
आरत की आरति निवारिबे को तिहूँ पुर,
तुलसी को साहिब हठीलो हनुमान भो ॥

हनुमान रचना करने में ब्रह्मा के समान, भक्तों का पालन करने के लिए विष्णु और शिव जैसे, मारने के लिए मृत्यु के समान, जिलाने के लिए अमृत जैसे हैं। आप पृथ्वी के समान भार धारण में समर्थ हैं, अंधकार का नाश करने को सूर्य के समान, सुखाने में अग्नि जैसे और पालने में चन्द्रमा के समान हैं। दुष्टों को दोष लगाने में वे दुःखरूप हैं और भक्तों को सन्तोष देने वाले हैं, तुच्छ वस्तु माँगने वाले को लड्डू खिलाने वाले हैं। दुःखियों का दुःख दूर करने को तुलसीदास के स्वामी दृढ़प्रतिज्ञ हनुमान तीनों पुरों में बस अकेले हैं।

रचना हेतु विधाता,
पालन हित हरि रूपे ।
संहारक शिव, जीवन हित
अहँ अमृत क कूपे ॥
शोषक अनल प्रमान,
चान रस पोषक शीतल ।
तिमिर - निकर केर भानु,
धारिणी धरिणी भूतल ॥

खल दूषक जन तोषके
याचक पारस मनि विदित ।
आरत जन त्रानक हठी
श्रीहनुमान महान हित ॥

(१२)

सेवक सेवकाई जानि जानकीस मानैं कानि,
सानुकूल सूलपानि नवै नाथ नाक को ॥
देवी देव दानव दयावने ह्वै जोरैं हाथ,
बापुरे बराक और राजा राना राँक को ॥
जागत सोवत बैठे बागत बिनोद मोद,
ताकै जो अनर्थ सो समर्थ एक आँक को ॥
सब दिन रूरो परै पूरो जहाँ तहाँ ताहि,
जाको है भरोसो हिय हाँक हनुमान को ॥

अपने सेवक हनुमान की सेवकाई जान श्रीराम उनके कृतज्ञ हैं, शिव सदा उनके अनुकूल रहते हैं और इन्द्र माथा नवाया करते हैं। देवी, देवता, दानव उनको प्रणाम किया करते हैं, फिर बेचारे दरिद्र राजा, राणा और रंक की कौन कहे। हनुमान के सेवक का जागते, सोते, उठते, बैठते मंगल ही होता है। जिसके हृदय में हनुमान की हाँक का भरोसा है उनको सदा सभी जगह सब कुछ पूरा ही पड़ता है।

सेव्यहु सँ सेवक हनुमान क
सेवा प्रियतर ।
जानथि जानकिनाथ,
शंकरहु मानथि सुखकर ॥
सुरपति झुकथि, देव - देवी
दानव दयनीये ।
कर जोड़थि, पुनि नर नरपति
कत की कथनीये ॥

सुतल रितल बैसल उठल
मारुति - सेवक निर्भये ।
बल भरोस धुनि हुनि जनिक
से जन नितप्रति सुखमये ॥

[१३]

सानुग सगौरि सानुकूल सूलपानि ताहि,
लोकपाल सकल लखन राम जानकी ।।
लोक परलोक को बिसोक सो बिलोक ताहि,
तुलसी तमाहि कहि कहाँ बीर आन की ।।
केसरीकिसोर बन्दीछोर के निवाजे सब,
कीरति विमल कपि करुनानिधान की ।।
बालक ज्यों पालिहैं कृपालु मुनि सिद्ध ताको,
जाके हिये हुलसति हाँक हनुमान की ।।

हनुमान के सेवकों पर शिव पार्वती, लोकपाल, लक्ष्मण, राम जानकी सभी अनुकूल रहते हैं, उसे लोक परलोक में कहीं भी शोक नहीं होता। हे तुलसीदास, अन्य बीर या देवी देवता उसपर क्रोध कर उसका क्या कर सकते हैं ? सभी तो केशरी-किशोर हनुमान की शरण में हैं और कैद से उन्हीं के छुड़ाए हुए हैं। जिसे करुणा के सागर हनुमान की हाँक का बल है उसको दयालु सिद्ध मुनि भी बच्चों की तरह पालते हैं।

केसरी क नन्दन क हाक वल
जनि मन हुलसित ।
तनिक उपर परिवार सहित
शिव गौरी प्रमुदित ॥
सकल लोक लोकप,
प्रसन्न श्रीराम जानकी ।
उभय लोक गतशोक, तनिक
पुनि चाह आन की ?

जत जे छथि दिवि देवता
ममता वत्सलता उमड़ि ।
हनुमान क सेवक उपर
बरिसथि करुणा घन घुमड़ि ॥

[१४]

करुनानिधान बलबुद्धि के निधान मोद,
महिमानिधान गुनज्ञान के निधान हो ॥
बामदेवरूप भूपराम के सनेही नाम,
लेत देत अर्थ धर्म काम निरबान हो ॥
आपने प्रभाव सीतानाथ के सुभाव सील,
लोक बेद विधि के बिदुष हनुमान हो ॥
मन की वचन की करम की तिहूँ प्रकार,
तुलसी तिहारो तुम साहिब सुजान हो ॥

हनुमान दया के स्थान हैं, बल बुद्धि और प्रताप के भंडार हैं, गुणज्ञान के धाम हैं, शिव के रूप हैं, राजाराम के स्नेही हैं, नाम लेने पर अर्थ धर्म काम मोक्ष देनेवाले हैं, अपने प्रभाव से और श्रीराम के शील-स्वभाव से लौकिक और वैदिक विधियों के पंडित हैं। हे हनुमान, मन, वचन, कर्म तीनों प्रकार से तुलसीदास तुम्हारा है और तुम तुलसीदास के चतुर स्वामी हो।

[१४]

करुणा वरुणालय, बल-
बुद्धिक अक्षय धामे।
महिमा गुण गरिमा निधान
निधि सिद्धि ललामे॥
राम सिनेह सदेह रुद्र-
अवतार प्रमाने।
आपक कें दी धर्म-अर्थ-
कामहु निर्वाने॥

निज प्रभाव संभाविते
सीतापति कर आन के?
तन मन वचनहु छी शरण,
अगति क गति छथि आन के?

[१५]

मन को अगम तन सुगम किये कपीस,
काज महाराज के समाज साज साजे हैं ॥
देव बन्दीछोर रनरोर केसरी किसोर,
जुग-जुग जग तेरे विरद बिराजे हैं ॥
बीर बरजोर घटि जोर तुलसी की ओर,
सुनि सकुचाने साधु खलगन गाजे हैं ॥
बिगरी सँवार अञ्जनीकुमार कीजे मोहि,
जैसे होत आये हनुमान के निबाजे हैं ॥

जिस काम का विचार मन में भी नहीं आता था उसे आपने सुगम कर दिया। महाराज रामचन्द्र के समाज साज को सज दिया। हे केशरीकिशोर हनुमान, आप देवताओं को कारागार से मुक्ति दिलाने वाले और युद्ध में खलबली मचाने वाले वीर हैं, आपका यश युग युग से संसार में विराज रहा है। ऐसे शक्तिशाली बीर का बल तुलसीदास की बार घट गया, यह सुनकर साधु दुःखी हैं और दुष्ट लोग प्रसन्न। हे अञ्जनीकुमार, मेरी बिगड़ी सुधारकर आप वैसा ही कीजिए जैसा हनुमान के भक्तों के होता आया है।

[१५]

मनहुँ न सकइछ जाय, ततय
गति अहँक अमन्दे ।
रघुराज क सब काज
पुराओल गुरु लघु छन्दे ॥
देवहु केँ उबारि, दानव–
रन रोर मचाओल ।
युग - युग धरि यश विरुद
तुलसिहि क बेर घटाओल ॥

सुनि सकुचथि से सुजन, पुनि
दुर्जन गज्जथि चित हुलसि ।
बिगड़ल बात सम्हारि प्रभु,
टेक विभूति क गहु तुलसि ॥

सुजान सिरोमनि हौ हनुमान,
सदा जन के मन बास तिहारो ॥
ढारो बिगारो मैं काको कहा,
केहि कारन खीझत हौं तो तिहारो ॥
साहिब सेवक नाते ते हौं तो,
कियो तो तहाँ तुलसी को न चारो ॥
दोष [illegible] सुनायेते आगेहुँ को,
हुसियार ह्वैहो मन तौ हिय हारो ॥

हे हनुमान, तुम ज्ञानियों के शिरोमणि हो और अपने सेवकों के मन में तुम्हारा सदा वास है। मैंने किसी का क्या बिगाड़ा है ? किस कारण मुझसे खीझते तो ? आखिर हूँ तो मैं तुम्हारा ही। यदि आप स्वामी-सेवक सम्बन्ध का त्याग करेंगे तो तुलसीदास बेचारा कहाँ जायगा ? मैं मन में हिम्मत हार गया हूँ फिर भी अपना दोष सुनकर आगे के लिए सावधान हो जाऊँगा।

[१६]

ज्ञानि-शिरोमणि! मारुति! अहँ
जन मानस वासी।
ककर कतय की हरल-बिगाड़ल,
रहु न उदासी॥
नाथ! हाथ मे अहँक दास
पुनि बिसरि न जयबे।
दोष सुझबितहुँ सम्हरवा क
अवसर न दुरयबे॥

सेव्य अहाँ, सेवक हमहुँ
ई चिरभाव निबन्ध जे।
हिय हारल रहितहुँ, अहिँक
अवलम्बन अनुबन्ध से॥

[१७]

तेरे थपै उथपै न महेस,
थपै थिर को कपि जे घर घाले ॥
तेरे निवाजे गरीबनिवाज,
विराजत बैरिन के उर साले ॥
संकट सोच सबै तुलसी,
लिए नाम फटै मकरी केसे जाले ॥
बूढ़ भये बलि मेरिहि बार,
की हारि परे बहुतै नत पाले ॥

हे हनुमान, तुम्हारे बसाये हुए को शिव भी नहीं उजाड़ सकते, फिर तुम्हारे उजारे हुए घर को अच्छी तरह कौन बसा सकता है ? हे गरीबनिवाज, तुम्हारी रक्षा किए हुए बिराज रहे हैं, जो शत्रुओं के हृदय में चुभ रहा है। तुलसीदास कहते हैं कि हनुमान का नाम लेने से सारे दुःख और सोच मकड़ी के जाले के सामान नष्ट हो जाते हैं। मेरी ही बार क्या तुम बूढ़े हो गये या बहुत सारे भक्तों का पालन करते करते थक गये हो ?

[१७]

दी बसाय जनिका, तनिका
हरहु न उपटावथि ।
जँ उजाड़ि दी तँ पुनि
तकरा के अटकावथि ?
दी उबारि जकरा से
रिपु - उर शल्य दुरन्ते ।
नाम उचारि करथि जन
चिन्ता - जाल क अन्ते ॥

हमरहि बेर अहाँ कोना
बुढ़ा गेलहुँ, अगुता गेलहुँ ?
आरत जन पालन नियम
करइत की अकछा गेलहुँ ?

[१८]

सिंधु तरे बड़े बीर दले खल
जारे हैं लङ्क से बङ्कमवासे।
तैं रनकेहरि के बदले मतले,
अरि - कुञ्जर छैल छवासे॥
तो सों समत्थ सुसाहिब सेइ,
सहै तुलसी दुख - दोष दवासे॥
बानर - बाज बढ़े खल खेचर,
लीजत क्यों न लपेटि लवा से॥

तुमने समुद्र पार किया, बड़े बड़े वीर राक्षसों को मार डाला और लंका जैसी कठिन नगरी को जला डाला। रण में सिंह के समान तुमने शत्रुरूपी हाथी के बच्चों को रौंद डाला। तुम से समर्थ स्वामी की सेवा करते हुए भी तुलसीदास असह्य दुःख और दोष सह रहा है! हे बानर-बाज, दुर्जन रूपी पक्षी बढ़ गये हैं, तुम उन्हें वैसे ही क्यों नहीं लपेट लेते जैसे बाज लवा पक्षी को पकड़ लेता है?

सागर पार कयल, कत भटकें
पटकि पछाड़ल ।
जारल लंक क बंक दुर्ग,
अरि दल संहारल ॥
रणकेशरी कपीश ! शत्रु–
गज पोतक मातल ।
करइत छल उत्पात पातकी,
छनहि निपातल ॥

एहन स्वामि-पद गहि तुलसि
दुख दोषें सीदित सुमन ।
कबिवर ! खल रुज खग कुचर
झपटिअ झट अहँ बाज बन ॥

[१६]

अच्छ - बिमर्दन कानन - भान,
दसानन - आनन भा न निहारे ॥
वारिदनाद अकम्पन कुम्भकरन्न,
से कुञ्जर केहरि - बारो ॥
राम – प्रताप हुतासन कच्छ,
बिपच्छ समीरु समीर - दुलारो ॥
पाप तें साप तें ताप तिहूं तें,
सदा तुलसी कहँ सो रखवारो ॥

हे अक्षय कुमार को मारनेवाले और वाटिका उजाड़ने वाले वीर, तुमने रावण के मुखतेज की ओर देखा भी नहीं। मेघनाद, अकम्पन और कुम्भकर्ण रूपी हाथियों को मारने में आप तरुण सिंह के समान हुए। हे पवन के दुलारे पुत्र, श्रीराम के प्रताप-रूपी अग्नि से विपक्षी के नगर को जलाने में आप पवनरूप हुए शाप और तीनों प्रकार के ताप से आपही सदा तुलसी की रक्षा करने वाले हैं।

[१६]

हनल अच्छ परतच्छ,
दशानन कें न गुदानल ।
कुंभकर्ण घननाद अकंपन
कुंजर हानल ॥
हे केशरीकिशोर! पवन-नन्दन
बनि पवने ।
राम - प्रतापानल पजारि
करु अरिदल दहने ॥

हे अंजनिनन्दन! विदित
सेवक - रक्षण व्रत अपन ।
पाप ताप अभिशाप सँ
लिअ उबारि तुलसी सुमन ॥

[२०]

जानत जहान हनुमान को निवाज्यो जन,
मन अनुमानि बलि बोल न बिसारिये।
सेवा-जोग तुलसी कबहूँ कहाँ चूक परी,
साहेब सुभाय कपि साहेबी सँभारिये॥
अपराधी जानि कीजै साँसति सहस भाति,
मोदक मरै जो ताहि माहुर न मारिये।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीर जू के,
बाँह पीर महाबीर बेगही निबारिये॥

यह संसार जानता है कि तुलसीदास हनुमान का सेवक है। हे हनुमान, मैं बलि जाता हूँ, विचार करके अपने वचन को न भूलिए। तुलसीदास तो आपकी सेवा के योग्य कभी था ही नहीं। न जाने कहाँ भूल हुई। हे हनुमान, आप अपने स्वामीवाले स्वभाव के अनुसार अपने स्वामीपन को सँभालिए। यदि मुझे दोषी पाइये तो अनेक तरह से दंड दीजिए परन्तु जो लड्डू देने से ही मरे उसे विष क्यों दें ? आप महावीर साहसी पवन के पुत्र हैं, श्रीराम के दुलारे है, मेरी बाँह की पीड़ा को शीघ्र ही दूर कीजिए।

जम जाहिर जे हनुमान क
ई सेवक साविक ।
हुजुर ! उजुर ई बुझि-सुझि
काव फैसला दाबि क ॥
अछि अयोग्य सेवक तुलसी
शासति पुनि उचिते ।
किन्तु मोदकहिँ मरय, न
तकरा माहुर पचते ॥

बिसरिअ विरुद न अपन ई
छी अहँ सेवकहित निरत ।
महावीर प्रभु ! भुज रुजा
मेटिअ झट, आबहुँ विकट ॥

[२१]

बालक बिलोकि बलि बारें ते आपनो कियो,
दीनबन्धु दया कीन्हीं निरुपाधि न्यारिये ।
रावरो भरोसो तुलसी के रावरोई बल,
आस रावरीयै दास रावरो बिचारिवे ॥
बड़ो बिकराल कलि काको न बिहाल कियो,
माथे पगु बली को निहारि सो निवारिये ।
केशरीकिसोर रन-रोर बरजोर बीर,
बाहुपीर राहुमातु ज्यौं पछारि मारिये ॥

हे दीनबन्धु, वलि जाता हूँ, बालक देखकर आपने लड़कपन से ही अपना लिया। आपने मुझ पर अनोखी, निर्मल दया की। तुलसीदास को आपही का भरोसा, आपही का बल है और आपको ही आशा है। आपहीं का दास हूँ, इस पर विचार कीजिए। कलिकाल बड़ा ही भयङ्कर है, ऐसा कौन है जिसे इसने व्याकुल नहीं किया ? बलिहारी है आपकी, देखिये यह बलवान मेरे माथे पर अपना पैर रख रहा है, अब तो इसे रोकिये। हे केशरीकिशोर हनुमान, आप युद्धस्थल में खलबली मचाने वाले वीर हैं। जैसे आपने राहुमाता का वध किया, वैसे ही बाँह की पीड़ा दूर कोजिए।

[२१]

दीनबन्धु ! शिशु दीन देखि
सहजहिँ अपनाओल ।
दया अहेतुक अहँक निरखि
पद गहि गोहराओल ॥
अहिँक आस - विश्वास,
अहिँक बल बोल-भरोसो ।
दास खास अछि अहिँक
रहओ वरु मूढ़ सदोषो ॥

कलि कराल कटु कोप कय
करइत कंपित सिर चढ़ल ।
यदनु सिंहिका संहरल,
हरिअ हमर पीडा प्रबल ॥

[२२]

उथपे थपन थिर थपे उथपनहार,
केसरी कुमार बल आपनो सँभारिये।
राम गुलामनि को कामतरु रामदूत,
मोसे दीन दूबरे को तकिया तिहारिये॥
साहिब समर्थ तोसो तुलसी के माथे पर,
सोऊ अपराध बिनु वीर बाँधि मारिये।
पोखरी बिसाल बाहु बलि बारिचर पीर,
मकरी ज्यौं पकरि कै बदन बिदारिये॥

उजड़े को अच्छी तरह बसाने वाले और बसे हुए को उजाड़ने वाले हे केशरीकुमार हनुमान, अपना बल सँभालिए। हे श्रीराम के दूत, आप रामभक्तों के लिए कामतरु हैं, मुझसे दीन दुर्बल को आपका ही सहारा है। आपसा समर्थ स्वामी मेरी रक्षा करने वाला है फिर भी बिना अपराध ही बाँध कर मारा जाता हूँ। इस बाहुरूपी विशाल पोखरी में यह पीड़ारूपी जलजन्तु है, जैसे आपने मगर का मुँह फाड़ मार डाला वैसे ही इस पीड़ा का नाश कीजिए।

उजड़ल के दी बाग,
उजाड़ी बहसल बसलो।
हे केसरी किशोर! सम्हरि
बल देखबिअ अपलो॥
राम गुलाम क काम कल्पतरु
राम - दूत! अहुँ।
तव पद माथ चढ़ाय नाथ,
पड़ तुलसि विपद कहुँ?

बाहु विशाल तड़ाग ई
पीड़ा जलचर संचरय।
हरु हमरहु दुख-दोष पुनि
मुख मकड़ीक विदारि कय॥

[२३]

राम को सनेह राम साहस लखन सिय,
राम को भगति सोच संकट निवारिये।
मुद - मरकट रोग - बारिनिधि हेरि हारे,
जीव जामबन्त को भरोसो तेरो भारिये॥
कूदिये कृपाल तुलसी सुप्रेम पब्बइ तें,
सुथल सुबेल भाल बैठि कै विचारिये।
महाबीर बाँकुरे बराकी बाहुबीर क्यों न,
लंकिनी ज्यों लातघात ही मरोरि मारिये॥

हे हनुमान, मेरा रामप्रेम, मेरा साहस, राम लक्ष्मण सीता में मेरी भक्ति, इन सब पर विचार कर मेरे संकट को दूर कीजिये। मेरे रोग रूपी विशाल सागर को देख कर आनन्द रूपी वानर हिम्मत हार गए हैं, पर जीव रूपी जामवन्त को तुम्हारा ही भारी भरोसा है। हे कृपालु हनुमान, अब तुलसीदास के प्रेम रूपी पर्वत पर से कूदिये, सुवेल पर्वत पर बैठ कर जामवन्त चिन्ता कर रहे हैं। हे बाँके महावीर, जैसे आपने एक लात ही में लंकिनी को मार डाला था वैसे ही इस तुच्छ बाहुपीड़ा को मरोड़ कर मार डालिए।

[२३]

हिय बिच राम सिनेह रूप,
लछुमन साहस पुनि ।
भक्ति मैथिली, तखन कष्ट
जे किछु हुनकहि गुनि ॥
रोग सिन्धु लखि मुद मर्कट
दल हारल होसे ।
जीव जांबवंतहु क अछिंक
अछि एक भरोसे ॥

प्रेम - पर्वत क उपर चढ़ि
कूदि सुबेल क शिखर प्रति ।
भुज-रुज लंकिनि कें दुरिअ
महावीर ! पद घात हति ॥

[२४]

लोक परलोकहुँ तिलोक न बिलोकियत
तो सो समरथ चष चारिहुँ निहारिये ।
कर्म काल लोकपाल अग जग जीव जाल,
नाथ हाथ सब निज महिमा बिचारिये ॥
खास दास रावरो निवास तेरो तासु उर,
तुलसी सो देव दुखी देखियत भारिये ।
बात तरुमूल बाहुसूल कपि कच्छु बेलि,
उपजी सकेलि कपि खेल ही उखारिये ॥

मैं चारों ओर देखता हूँ लेकिन तीनों लोक, लोक परलोक और तीनों काल में मुझ जैसा समर्थ कहीं नहीं दिखाई देता। कर्म, काल, लोकपाल, चल, अचर, जीवजाल सभी आपही के हाथ में हैं। आप अपनी महिमा का विचार कीजिए। हे देव, अपने विशेष सेवक—जिसके हृदय में आपका वास स्थान है,—तुलसीदास का यह भारी दुःख आपसे कैसे देखा जाता है? बाँहरूपी वृक्ष की जड़ में बाहुपीड़ारूपी यह जो लता उपजी है, हे हनुमान, इसे खेल ही खेल में उखाड़ डालिए।

चहुदिस चख देखल, कहुँ
भुवन न अहँक समाने ।
समरथ, जनि आदेश
काल दिक्पालहु मानै ॥
अग जग जत जे जीवजन्तु
सभ अहँक अधीने ।
महिमा अपन विचारि करिअ
जे उचित प्रवीने ॥

खास दास तुलसी क उर
बसितहुँ, भुज रुज उपजल्ले ।
कपि ! उपाड़ु कविकच्छु तरु
गरु रोग क जड़ि जमल जे ॥

करम कराल कंस भूमिपाल के भरोसे,
बकी बक भगिनी काहू तें कहा डरैगी ।
बड़ी बिकराल बाल घातिनी न जात कहि,
बाहुबल बालक छबीले छोटे छरैगी ॥
आइ है बनाइ वेष तू बिचारि देख,
पाप जाय सबको गुनी के पाले परैगी ।
पूतना पिसाचिनी ज्यों कपि कान्ह तुलसी की,
बाहुपीर महाबीर तेरे मारे मरैगी ॥

भयङ्कर कर्म रूपी कंस राजा के बल पर, रोगरूपी बकासुर की बहन किसी से क्यों डरेगी ? इस महाभङ्क , बालकों को खाने वाली की तुलना कही नहीं जाती यह मेरे बाहुबल रूपी छोटे-छोटे सुन्दर बालकों को छलेगी । हे हनुमान, आप ही विचार देखें, यह कैसा वेष धर कर आई है, जब यह आप गुणी के पाले पड़ेगी तभी सबका यह दुःख दूर होगा । जैसे श्रीकृष्ण ने पिशाचिनी पूतना का बध किया, हे महाबलवान, यह तुलसीदास की बाहुपीर तेरे ही हाथ से मरेगी ।

कलि कुचालि कंसक भरोस सँ
भरि उर साहस ।
चकी पूतना डरय टरय नहि,
उर भरि विष - रस ॥
प्राण घातिनी विकट कलेवर
शिशु भरि अंके ।
आयल गुपचुप रूप बना
गुन गोपि अबंके ॥

हनलन्हि कृष्ण सतृष्ण पिबि
दूध सुध प्राणेँ पनेँ ।
बाहु वेदना पूतना
पवनपूत हनता भने ॥

भाल कि काल की कि रोष की त्रिदोष की है,
बेदन बिषम पापताप छलछाँह की ।
करमन कूट की कि जंत्र-मंत्र बूट की,
पराहि जाहि पापिनी मलीन मन माँह की ॥
पैहहि सजाय न तु कहत बजाय तोहि,
बावरी न होहि बानि जानि कपि नाह की ।
आन हनुमान की दोहाई बलबान की,
सपथ महाबीर की जो रहै पीर बाँह की ॥

पता नहीं यह विषम वेदना कर्म की रेखा से, काल से, क्रोध से, त्रिदोष से या दैहिक, दैविक, भौतिक तीनों प्रकार के ताप के पाप से है, या कपट की छाँह से, मारण आदि प्रयोग के बल से, या यन्त्र मंत्ररूपी बूटी का फल है, जो भी हो, हे पापिनी, तू मन की मलिनता है, भाग जा नहीं तो सजा पायेगी । डंके की चोट से मैं कहता हूँ, हनुमान का स्वभाव जानते हुए पागलपन न कर । हनुमान की आन, बलवान की दुहाई है, महावीर की शपथ है, जो बाहुपीर रह जाय ।

की काल क.की भाल क दोषें
किं - वा त्रिदोषें ।
कोनहु पाप तापें, कृत कर्म
विपाक क रोषें ॥
यंत्र मंत्र कलि कपट कूट
बूटी विष योगें ।
प्रबल भेल भुजमूल शूल
छूटि जाह नियोगें ॥

नहि तँ हनुमान क शपथ
आन मान हुनि बल प्रबल ।
पीड़ा कीड़ा रोग दुख
छुनहि छपित होयबह निबल ॥

[२५]

सिंहिका सँहारि बलि सुरसा सुधारि छल,
लंकिनी पछारि मारि वाटिका उजारी है।
लङ्का परजारि मकरी बिदारी बार बार,
जातुधान धारि धूरि धानी करि डारी है ॥
तोरि जमकातरी मन्दोदरी कठोरि आनी,
रावन की रानी मेघनाद - महतारी है।
भीर बाँह पीर की निपट राखी महाबीर,
कौन के सँकोच तुलसी के सोच भारी है ॥

मैं बलि जाता हूँ, आपने ही सिंहिका को मारा, सुरसा को छल द्वारा सुधारा, लङ्किनी को पछाड़ मारा और अशोक वन को उजाड़ डाला, राक्षसी सेना को बार बार गर्द की ढेर बना डाला। रावण के महल के फाटक को तोड़ आप उस मन्दोदरी को बाहर खींच लाए, जो रावण की रानी और मेघनाद जैसे बीर की माता थी। हे महावीर, बाहुपीड़ा के इस भारी सोच को किस के संकोच से अब तक छोड़ रक्खा है, तुलसीदास को इसी का सोच है।

[२७]

संहारल सिंहिका, नीति मत
सुरसा साधल ।
लंकिनि हनल निशंक, मर्कारिका
उदर बिदारल ॥
बन वाटिका उजाड़ि पजारल
लंक कनक - पुरि ।
जातुधान दल सानि धूलि
रावन बल मद दुरि ॥

हति हिंसक घमिटल सहटि
मन्दोदरि पति सुत समुख ।
तुलसि क भुज रुज नाश हित
किऐ संकुचित चित बिरुख ॥

तेरी बालकेलि बीर सुनि सहमत धीर,
भूतल शरीर - सुधि सक्र रवि राहु को ।
तेरी बाँह बसत बिसोक लोकपाल सब,
तेरो नाम लेत रहै आरति न काहु की ॥
साम दान भेद विधि वेदहु लवेद सिद्धि,
हाथ कपिनाथही के चोटी चोर साहु की ।
आलस अनख परिहास की सिखावन हैं,
एते दिन रही पीर तुलसी के बाहु की ॥

हे बीरपुरुष, तेरे लड़कपन के खेल को सुनकर धीर भी सहम जाते हैं तथा इन्द्र, सूर्य, राहु तक को अपने शरीर की सुधि नहीं रहती। तेरे बल से सारे लोकपाल शोकरहित रहते हैं, तेरे नाम लेने से किसी का दुःख नहीं रहता। साम, दान, भेद की विधियाँ वेद और लवेद की सिद्धियाँ सब आप ही के हाथ में हैं। साहूकार और चोर दोनों ही की लगाम आपही के हाथ है। क्या आलस, या क्रोध, या कि परिहास या कि शिक्षा देने को इतने दिन तक आपने तुलसीदास के बाँह की पीड़ा रहने दी ?

[२८]

अहँक बाल क्रीडा अद्भुत
गुनि सहमथि धीरो ।
इन्द्र चन्द्र रवि राहु मंद
ग्रह बिसरु शरीरो ॥
अहँक बाहु दिक्पाल बसथि
आरत - हर नामे ।
साम दाम विधि भेदहु,
बेदहु कह, अहँ धामे ॥

चोर - साधु सत - असत जत
अहिँक हाथ चोटी सभक ।
अलस रोष परिहास वा
तुलसिक भुज रुज सिख-सबक ॥

[२९]

टूकनि घर घर डोलत कंगाल बोलि,
बाल ज्यों कृपाल नतपाल पालि पोसो है।
कीन्ही है सँभार सार अंजनी कुमार बीर,
आपनो बिसारि हैं न मेरे हूँ भरोसो है॥
एतनो परेखो सब भाँति समरथ आजु,
कपिनाथ साँची कहौ को त्रिलोक तोसो है।
साँसति सहत दास कीजै पेषि परिहास,
चीरी को मरन खेल बालकनि को सो है॥

टुकड़ों का मुहताज मैं घर घर घूमता फिरता था। आपने मुझे वैसे ही पाला जैसे अपने बच्चे पाले जाते हैं। वीर अंजनी के बेटे ने मेरी देख-भाल की। और आज आप मुझे भूल बैठेंगे इसकी मुझे उमीद नहीं है। आज मैंने सब समर्थों को अच्छी तरह परख लिया, पर हे कपिनाथ, मैं सच कहता हूँ, तीनों लोक में आपके समान लायक कोई नहीं है। सेवक का दुःख देखकर भी आप हँसी कर रहे हैं, यह तो वही हुआ कि "चिड़िए की जान जाय, बच्चों का खेल"!

अन-कन हित घर घर घुमि
कत दुतकार सहेजल ।
पुनि तकरहु बुझि बाल
दया लव पानि अडेजल ॥
अंजनिनन्दन! कोना तखन
पुनि बिसरि रगेदी ।
वा कुतूहलेँ जाँच फेर मे
देल बिनोदी ॥

किन्तु कपीश्वर कौतुकी !
कहबी चलित कहंत जे ।
नेना भुटका खेड़ि जे
चड़ै - झुनझुनि क अंत से ॥

[३०]

आपने ही पाप तें त्रिताप तें कि साप तें,
बढ़ी है बाहुबेदन कही न सहि जाति है।
औषध अनेक जंत्र-मंत्र टोटकादि किये,
बादि भए देवता मनाए अधिकाति हैं॥
करतार भरतार हरतार कर्म काल,
को है जगजाल जो न मानत इताति है।
चेरो तेरो तुलसी तू मेरो कह्यो रामदूत,
ढील तेरी बीर मोहि पीर तें पिराति है॥

अपने ही पाप से या तीनों ताप से, या किन्हीं देवी देवताओं के शाप से बाँह की वेदना ऐसी बढ़ी है कि न तो कही जाती है, न सही जाती है। अनेक औषधि, यंत्र, मंत्र, टोटका आदि प्रयोग किये पर सब व्यर्थ हुए। देवताओं के मनाने से पीड़ा बढ़ती ही जाती है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, कर्म, काल, संसार के इस जाल में कौन ऐसा है जो तुम्हारी आज्ञा का पालन न करता हो? तुलसी तुम्हारा ही गुलाम है। हे रामदूत, तूने भी कहा कि तू मेरा है। हे वीर! तेरी ढिलाई मुझे इस पीड़ा से भी अधिक पीड़ित कर रही है।

पाप त्रिताप विषम अभिशाप
कोनहु निज दोषें ।
बढ़ल वेदना बाहु असह्
विधि दैव.क दोषें ॥
औषध यंत्र मंत्र टोटम
सभ व्यर्थ बुझाइछ ।
जत जत जतन कयल तत तत
दुख बढ़ले जाइछ ॥

काल कर्म विधि हरि हरहु
अहँक निदेश न टारि सक ।
रामदूत ! अनठाउ जुनि
अहिंक दास तुलसी असक ॥

[३१]

दूत रामराय को सपूत पूत वाय को,
समत्थ हाथ पाय को सहाय असहाय को।
बाँकी बिरुदावली बिदित वेद गाइयत,
रावन सो भट भयो मूठिका के घाय को॥
एते बड़े साहेब समर्थ को निवाज आजु,
सीदत सुसेवक बचन मन काय को।
थोरि बाहुपीर की बड़ी गलानि तुलसी को,
कौन पाप कोप लोप प्रगट प्रभाय को॥

तुम राजा राम के दूत हो, वायुदेव के सुपुत्र हो, हाथ पैर के समर्थ, बलवान हो, असहायों के सहायक हो। तुम्हारी सुन्दर कीर्ति लोकविख्यात हैं और वेद गाते हैं। रावण जैसा वीर बस तुम्हारे एक चोट भर को हुआ, लगते ही मूच्छित हो गया। इतने बड़े शक्तिशाली स्वामी को पाकर भी आज मन-वचन-कर्म से योग्य यह सेवक तुलसीदास दुःख पा रहा है। तुलसीदास कहते हैं कि मुझे बाहुपीड़ की तो थोड़ी ही ग्लानि है, अधिक सोच इस बात का है कि न जाने किस पाप पर आपने क्रोध किया है, जिससे आपके प्रकट प्रभाव का लोप हो गया हो।

[३१]

रामदूत पवन क सपूत
कर - चरण अमित बल ।
संहारल मुष्टिक प्रहार
अगणित रावण दल ॥
वेद विदित विरुदावलि
प्रभुता विभुता देवक ।
तन मन बैन न चैन
विकल विह्वल तव सेवक ॥

प्रभुक महत्ता निकट की
रोग शोक लघुता ललक ।
भुज रुज पाप गलानि कत
हरु कृपालु करुणा पलक ॥

[३२]

देवी देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत हो !
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधान बाम,
रामदूत की रजाइ माथे मानि लेत हैं ॥
घोर जंत्र मंत्र कूट कपट कुजोग रोग,
हनुमान आन सुनि छाँड़त निकेत हैं ।
क्रोध कीजै कर्म को प्रबोध कीजै तुलसी को,
सोध कीजै तिनको जो दोष दुख देत हैं ॥

देवी, देवता, दानव, मनुष्य, मुनि, सिद्ध, नाग, छोटे, बड़े जितने भी जड़ चेतन जीव संसार में हैं, पूतना, पिशाचिनी, कुटिल राक्षस सब श्रीरामदूत हनुमान की आज्ञा सिर चढ़ाते हैं। विकट मंत्र, मारण, छल, बुरे प्रयोग, रोग, सब हनुमान का आना सुनकर घर छोड़ भागते हैं। हे हनुमान, कर्म पर क्रोध कीजिए और तुलसीदास का प्रबोध कीजिए। उन दोषों को दूर कीजिए जो दुःख देते हैं।

ऋषि मुनि देव पितर छथि जे जत
सिद्ध साध्य जन ।
यक्ष नाग गन्धर्व असुर सुर
भूत प्रेत जन ॥
आज्ञा लेथि चढ़ाय माथ
रघुवीर क दूत क ।
रोग शोक दुख दुरय
नाम सुनि पवन क पूतक ॥

कर्म दोष पर रोष कय
तोष होस तुलसी क दय ।
सोधिय जे दुख दय रहल
हे कपीश करुणानिलय ॥

तेरे बल बानर जिताये रन रावन से,
तेरे घाले जातुधान भये घर घर के।
तेरे बल रामराज किये सब सुरकाज,
सकल समाज साज साजै रघुबर के॥
तेरे गुनगान सुनि गीरवान पुलकित,
सजल विलोचन विरंचि हरि हर के।
तुलसी के माथे पर हाथ फेरौ कीसनाथ,
देखिये न दास दुखी तो से कनिगर के॥

हे हनुमान, तेरे ही बल ने वानरों को रावण के विरुद्ध जीत दिलाई। तेरे ही मारे राक्षस नष्ट हो गए। तेरे ही बल से राजाराम ने देवताओं के कार्य किए। तूने श्रीराम के सारे समाज साज को सजा दिया। तेरा गुणगान सुन देवता हर्षित होते हैं, विष्णु और शिव के नेत्रों में आनन्द के आँसू भर जाते हैं। हे वानरों के स्वामी! तुलसीदास के माथे पर अपना हाथ फेरो। तेरे जैसे मर्यादा के रक्षक को अपने सेवक का दुःख नहीं देखना चाहिये।

अहँक पराक्रम बल
वानर दल जीतल लंका ।
राम कयल सुर काज
हनल रावन रन बंका ॥
साजल सकल समाज
राम - राज क रहि मूले ।
जय कपीश मर्यादा–
पालक ! जगत अतूले ॥

गावि अहँक गुन देव गन
पुलकित विधि हरि हर सुमन ।
माथ हाथ तुलसी क दय
मर्यादा राखिअ अपन ॥

[३४]

पालो तेरे टूक को परे हूँ चूक मूकिये न,
कूर कौड़ी दू को हों आपनो ओर हेरिये।
भोरानाथ भोरे हौ सरोष होत थोरे दोष,
पोषि तोषि थापि आपने न अवडेरिये ॥
अंबु तू हों अंबुचर अंब तू हों डिंभ सो न,
बूझिये विलंब अवलंब मेरे तेरिये।
बालक बिकल जानि पाहि प्रेम पहिचानि,
तुलसी की बाँह पर लामी लूम फेरिये ॥

मैं आपके टुकड़ों से पला हूँ। मुझसे गलती हो गई हो तो भी मेरा त्याग न कीजिये। मैं दो कौड़ी का हूँ, किसी काम का नहीं, पर आप अपनी ओर देखिए, आप तो समर्थ हैं। आप भोलानाथ तो भोले हैं, थोड़ी सी गलती पर क्रोध करते हैं, पोस पाल कर और बसा कर मुझे निकाल बाहर न कीजिए। तुम जल हो, मैं जलजीव हूँ, तुम माता हो, मैं बच्चा, यह समझ देर न कीजिए, मुझे आपही का भरोसा है। बालक को विकल समझ कर रक्षा कीजिए, प्रेम पहचान कर तुलसी की बाँह पर अपनी लम्बी पूँछ फेरिए।

अहिँक देल अन - कन सँ
पालित अधम शरीरे ।
चूक करिअ हम क्षुद्र
मोल कौड़ि क लघु कीड़े ॥
भोलानाथ ! अनाथ क किछु
दोषहु न रोषायब ।
चिर सेवक सम्बन्ध अपन
आश्रयहि बसायब ॥

मीन पानि, शिशु जननि बुझि
प्रेम परखि रुखि राखबे ।
अपन लंब लांगूल लय
विकल अंग सहलायबे ॥

घेरि लिये रोगनि कुलोगनि कुजोगनि ज्यों,
बासर जलद घनघटा धुकि धाई है।
बरषत बारि पीर जारिये जवासे जस,
रोष बिनु दोष धूम मूल मलिनाई है॥
करुनानिधान हनुमान महाबलवान,
हेरि हँसि हाँकि फूँकि फौजैं तैं उड़ाई है।
खायो हुतो तुलसी कुरोग राढ़ राकसनि,
केसरीकिसोर राखे बीर बरियाई है॥

मुझे रोगों, बुरे लोगों और बुरे योगों ने वैसे ही घेर लिया है जैसे वर्षा ऋतु में किसी-किसी दिन घोर घटाएँ घेर लेती हैं, ये सब निरपराध मुझ पर क्रोध कर रहे हैं। पीड़ा रूपी जल की वर्षा हो रही है, मेरे यश के जवासे जल कर जड़ तक काले पड़ गए हैं, हे करुणानिधान महावीर, इसे देख कर हँस कर, हाँक लगा कर, फूँक कर, इस बादल सेना को उड़ा दीजिए। तुलसी दास को तो निर्दय राक्षसों ने कब खा लिया होता, वह तो आप केशरीकिशोर ने बल पूर्वक रक्षा की है।

रोग-ताप दुर्योग आदि
घेरल दुर्जन दल ।
दिन केँ जनि घन घटा
घेरि बरिसाबय दुख जल ॥
जस जवास झुलसाय
ज्वलित बिनु दोष रोष मे ।
पवनपूत ! अहँ फूकि
उड़ाबिअ हँसी जोस मे ॥

दुष्ट रोग राकस जकड़ि
गिड़ि जैते सहजहिँ प्रबल ।
हे केसरी-किसोर ! यदि
अहँ न बरजितहुँ बेगि बल ॥

रामगुलाम तुही हनुमान,
गुसाईं गुसाईं सदा अनुकूलो।
पाल्यौ हौं बाल ज्यौं आखर दू,
पितु मातु ज्यौं मंगलमोद समूलो॥
बाँहु की बेदन बाँहपगार,
पुकारत आरत आनन्द भूलो।
श्रीरघुबीर निवारिये पीर,
रहौं दरबार परो लटि लूलो॥

जीवों के पालनेवाले हे श्रेष्ठ स्वामी, हे हनुमान, तुम श्रीराम के सेवकों के सदा अनुकूल हो। रामनाम के दो अक्षरों ने मुझे मातापिता की भाँति पाला है, जैसे आनन्द मंगल की जड़ को पालते हैं। हे दृढ बाहु वाले, बाँह की पीड़ा से दीन होकर सारा आनन्द भूल कर मैं तुम्हें पुकारता हूँ। मेरी पीड़ा को दूर करो, जिससे श्रीराम के दरबार में दुबला लूला होकर ही पड़ा रहूँ।

जीव ज्योति इन्द्रिय वाणी–
स्वामी — गोस्वामी !
प्रभु महान हनुमान
राम - सेवक सहगामी ॥
राम नाम दुहु आखर
जनक-जननि पालित भल ।
महाबाहु ! गहि बाहु वेदना
हरिअ शूल मल ॥

रघुवर दर - दरबार गहि
पड़ल रहब मालिक क रुख ।
लटि - लुटि लूलो - नाङरो
टुक्र-कुबर प्रभु निकट सुख ॥

काल की करालता करम कठिनाई कीधौं,
पाप के प्रभाव की सुभाव बाय बावरे।
वेदन कुभाँति सो सही न जाति राति दिन,
सोई बाँह गही जो गही समीर डाबरे॥
लायो तरु तुलसी तिहारो सो निहारि बारि,
सींचिये मलीन भो तयो है तिहुँ तावरे।
भूतनि की आपनी पराई है कृपानिधान,,
जानियत सबही की रीति राम रावरे॥

कौन जाने काल की भयङ्करता है या कर्म की कठिनता, पाप का प्रभाव है या बावरे वायु के स्वभाव से ऐसा है, पर रात दिन ऐसा विकट दर्द हो रहा है कि सहा नहीं जाता। इस दर्द ने उसी बाँह को पकड़ा है जिसे हनुमान ने पकड़ा था। यह तुलसीदास रूपी वृक्ष आपका ही लगाया हुआ है और त्रिताप से तप तप कर मलिन हो रहा है। यह देख अपनी कृपा के जल से इसे सींचिए। पता नहीं भूत प्रेत की बाधा है या अपने ही पाप का फल है, पर हे कृपानिधान राम, आप तो सब की रीति जानते हैं, आप इसे दूर कीजिए।

[३७]

कालक कुटिल प्रभाव
स्व-कृत कर्महि क विपाके ।
पाप क कटु परिपाक
सहज कफ-पित्त-प्रवाते ॥
एना वेदना व्यथा राति दिन
सहल न जाइछ ।
पवनपूतहि क गहल बाँहि
किछु कहल न जाइछ ॥

रोपल तुलसी, ताप त्रय
झुलसि रहल, करुणानिधे !
कृपा-बिन्दु सिञ्चित करिअ
अन्तर्यामी ! जहि विधे ॥

पाँयपीर पेटपीर बाहुपीर मुँहपीर,
जरजर सकल सरीर पीरमई है।
देव भूत पितर करम खल काल ग्रह,
मोहिं पर दवरि दमानक सी दई है॥
हौं तो बिन मोल ही बिकानो बलि बारेहीतें,
ओट राम नाम की ललाट लिखि लई है।
कुंभज के किंकर बिकल बूड़े गोखुरनि,
हाय रामराय ऐसी हाल कहूँ भई है॥

पैर में दर्द, पेट में दर्द, मुँह में दर्द, बाँह में दर्द, पीड़ामय होकर शरीर जर्जर हो गया है। देवता, भूत, पितर, कर्म, काल, ग्रह, और दुष्टों ने एक साथ मुझ पर तोपों की बाढ़ सी छोड़ दी है। बलि जाता हूँ, मैं तो बचपन से ही बेमोल बिका हूँ और राम नाम की ओट ललाट पर लिख ली है। समुद्र पान करने वाले अगस्त्य का दास जैसे गौ के खुर के बराबर जल में व्याकुल डूबता हो, वैसी ही मेरी दशा है। हे राजा राम, ऐसा भी कहीं हुआ है?

[३८]

पद चलबा मे व्यथा
उदर बाहु क बहु पीड़ा।
जर्जर सकल शरीर
बिरुख मुख रोग क कीड़ा॥
बुझि पड़इछ जत देव-पितर
सभ कुपित भेल अछि।
ग्रह विग्रह भौतिक वैदिक
दुख बलित भेल अछि॥

राम नाम सिर धय, अहँक
कीत दास भेलहुँ जखन।
कुंभज किंकर डुबय की
गोपद - जल किन्नहु तखन!

बाहुक - सुबाहु नीच लीचर मरीच मिलि,
मुँहपीर - केतुजा कुरोग जातुधान हैं।
रामनाम जप जाग कियो चाहौं सानुराग,
काल कैसे दूत भूत कहा मेरे मान हैं॥
सुमिरे सहाइ रामलषन आखर दोउ,
जिनके साके समूह जागत जहान हैं।
तुलसी सँभारि ताड़का सँहारि भारी भट,
बधे बरगद से बनाइ बानबान हैं॥

बाँह का शूल नीच सुबाहु है, शरीर की क्षीणता जैसे मारीच, मुँह की वेदना ताड़का है, तो अन्य रोग और राक्षस हैं। मैं प्रेम से रामनामजप-रूपी यज्ञ करना चाहता हूँ, उसमें ये सब मिलकर विघ्न कर रहे हैं। ये काल के समान भूत दूत मेरे वश के नहीं। स्मरण करने से रामनाम के रामलक्ष्मण रूपी दो अक्षर मेरे सहायक हुए, जिनकी कीर्ति जगत में प्रसिद्ध है। दोनों ने ताड़का को मारा और फिर भारी भारी योद्धाओं को बाण से बरगद के फल के समान बेध डाला। रामनाम ने अपने प्रताप से तुलसीदास के रोगरूपी राक्षसों का नाश किया।

बाहु के पीडा असुर सुबाहु
देह दुर्बलता ।
मिलि मारीच नीच, मुह–
पीडा प्रबल ताडका ॥
करइछ जीवन - यज्ञ विघ्न
नामहु जप बाधा ।
दूत भूत विकराल काल जनु
प्रभु पद साधा ॥

राम - लखन आखर दुहू
तुलसी करु सुमिरन सुमन ।
भट उद्भट शर निकर हति
उत्पीडक, दुख द्रुत शमन ॥

बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
रामनाम लेत माँगि खात टूकटाक हौं।
पर्यो लोक रीति में पुनीत प्रीति रामराय,
मोह बस बैठो तोरि तरकि तराक हौं॥
खोटे खोटे आचरन आचरत अपनायो,
अंजनी कुमार सोध्यो रामपानि पाक हौं।
तुलसी गुसाईं भयो भोंड़े दिन भूलि गयो,
ताको फल पावत निदान परिपाक हौं॥

बचपन में सीधे मन से श्रीराम के सामने हाजिर हुआ, राम नाम लेता हुआ उनसे माँग खाता था। बाद में लोकाचार में पड़कर श्रीराम के पवित्र प्रेम के बन्धन को एकाएक तोड़ बैठा और बुरे-बुरे काम करते करते उन्हें ही अपना बैठा। फिर जब अञ्जनीकुमार, हनुमान ने खबर ली और श्रीराम के हाथ से मुझे पवित्र किया तो मैं मात्र तुलसी से गोस्वामी बन गया और अभिमानवश अपने बुरे दिन भूल गया जिसका अन्तिम फल आज अच्छी तरह पा रहा हूँ।

बाल वयस चित सहज
गहल राम क शुभ नामें ।
माङि चाङि भरि उदर
भाड सँ तुलसी ठामे ॥
लोक रीति अनरीति, प्रीति
राम क बिसरल धुनि ।
अघी नीच-रुचि के अपनाओल
पवन - पूत पुनि ॥

तदपि गोसाइँ कहाय जग
साँइ क रहल न ध्यान पुनि ।
हन्त ! अन्त तेँ दशा ई
पाप क कटु परिपाक गुनि ॥

(८१)

असन बसन हीन विषम विषाद लीन देखि,
दीन दूबरो करै न हाय हाय को।
तुलसी अनाथ सों सनाथ रघुनाथ कियो,
दियो फल सीलसिंधु आपने सुभाय को॥
नीच यहि बीच पति पाइ भरुआइ गो,
विहाय प्रभु भजन वचन मन काय को।
तातें तन पेषियत घोर बरतोर मिस,
फूटि फूटि निकसत लोन रामराय को॥

मुझे भूखा, नंगा, कठिन दुःख में पड़े दीन दुर्बल को देखकर कौन ऐसा था जो हाय हाय न करता था ? ऐसे अनाथ तुलसीदास को श्रीराम ने स्वयं सनाथ किया और अपने शील स्वभाव का फल शील के सागर ने दिया। इसी बीच यह नीच तुलसीदास प्रतिष्ठा पाकर फूल उठा और मन कर्म वचन से प्रभु का भजन छोड़कर शरीर पोसने लगा। इसी से इस बलतोड़ घाव के बहाने श्रीराम का नमक फूट फूट कर निकल रहा है।

अशन बसन नहि, दीन-खीन
चित चिन्ता आतुर ।
देखि दुखी हमरा, के नहि
छल चिन्ता कातर ॥
एहन अनाथ दास
तुलसी कें कयल सनाथे ।
सहज दयामय शील - सिन्धु
स्वामी रघुनाथे ॥

तदपि नीच एहि बीच ई
अति कृतघ्न बिसरल भजन ।
हन्त ! विषम ब्रन बनि फुटल
श्रीरघुराज क अन्न लबन ॥

जीबौं जग जानकीजीवन को कहाय जन,
मरिबे को वारानसी बारि सुरसरि को ।
तुलसी के दुहूँ हाथ मोदक है ऐसे ठाउँ,
जाके जिये मुये सोच करिहैं न लरिको ॥
मोको झूँठो साँचो लोग राम को कहत सब,
मेरे मन मान है न हर को न हरि को ।
भारी पीर दुसह शरीर तें बिहाल होत,
सोऊ रघुबीर बिनु सकै दूरि करि को ॥

संसार में जीना है तो जानकीजीवन श्रीराम का सेवक कहला कर जीऊँ और मरने के लिए तो यह बनारस और गंगाजल है ही । ऐसे स्थान पर तुलसीदास के दोनों हाथ लड्डू हैं, जिसके जीने मरने का सोच करने को कोई लड़के भी नहीं है । झूठ या सच, सब लोग मुझे राम का सेवक कहते हैं । मेरे मन में शिव का सम्मान है न विष्णु का । असह्य पीड़ा से शरीर व्याकुल है, उसे भी विना श्रीराम के कौन दूर कर सकता है ?

जानकि जीवनहि क जन बनि
(जीबो माँ मिथिले !)
वा काशी सुरसरि तीरे
अबहि लहि त्रिमले ॥
तुलसी मानस मुखर
उभय भल जीवन - मरने ।
जीनहु मुइनहु सोचय योग न
बाल अबल ने ॥

राम दास कह सत असत
हरि हर एको मान्य ने ।
असह देह पीडा हरथि
रघुवीरे क्यो आन ने ॥

[४३]

सीतापति साहेव सहाय हनुमान नित,
हित उपदेस के महेस मनो गुरु कै ।
मानस बचन काय सरन तिहारे पायँ,
तुम्हरे भरोसे सुर मैं न जाने सुर कै ।।
ब्याधि भूत जनित उपाधि काहू खल की,
समाधि कीजै तुलसी को जानि जन फुर कै ।।
कपिनाथ रघुनाथ भोलानाथ भूतनाथ,
रोगसिंधु क्यों न डारियत गायखुर कै ।।

श्रीराम मेरे स्वामी हैं, हनुमान नित्य सहायक हैं, जीव की भलाई हो ऐसा उपदेश करने वाले शिव को गुरु मानता हूँ। मन वचन और शरीर से तुम्हारे चरणों में हूँ, तुम्हारे भरोसे मैंने देवताओं को देवता कर नहीं जाना। किसी दुष्ट के उपद्रव से या भूत-जनित वाधा से मेरे इस रोग का, सच्चा सेवक जान, समाधान कीजिए। हे हनुमान, हे राम, हे भोलानाथ, भूतनाथ, रक्षा कीजिए, रोगरूपी समुद्र को गाय के खुर के समान कर डालिए।

जगत्पति क–जानकी पति क—
छी अहँ सहकारी ।
हित उपदेशक स्वयम्
शिवहि सरुपहि त्रिपुरारी ॥
तन मन वचन सबहि लय
गहलहुँ शरण चरण टा ।
अहँक बल - भरोसहिँ
गनलहुँ नहि कोनो देवता ॥

भौतिक दैविक व्याधि वा
दुरित उपाधि असाध वा ।
रोग सिन्धु गोपद करिअ
कपि हरिहर रूपहि दवा ॥

कहौं हनुमान सो सुजान रामराय सों,
कृपानिधान शंकर सों सावधान सुनिये।
हरष विषाद रोग रोष गुन दोष मई,
बिरचि बिरंचि सब देखियतु दुनियें॥
माया जीव काल के करम के सुभाव के,
करैया राम वेद कहैं साँची मन गुनिये।
तुम तें कहा न होय हा हा सो बुझैये मोहिं,
हौंहूँ रहौं मौन ही बयो सो जानि लुनिये॥

मैं हनुमान जी से, परम चतुर राजाराम से कृपासिन्धु श्री शंकर जी से कहता हूँ मेरी बात सावधान होकर सुनिए। सारे संसार को देखता हूँ जिसे ब्रह्मा ने हर्ष-विषाद, रोष, गुण-दोष-मयी बनाया है, जीव, काल, कर्म, स्वभाव सबकी सृष्टि करने वाले श्रीराम हैं, यह बात मन में विचार करने से सत्य मालूम होती है और वेद भी ऐसा ही कहते हैं। हे राम, तुम से क्या नहीं हो सकता, मेरी इस हाय-हाय को शान्त करो। मौन ही होकर रहूँ, जो बोया है उसी का फल पाता हूँ।

श्री हनुमान सुनथु,
श्रीरघुपति अन्तर्यामी ।
शंकर कृपा निधान सुनथु
मन दय अनुगानी ॥
हर्ष - विषाद राग - रोषो
रोगो गुण - दोषो ।
सभ विरंचिहि क रचित
सृष्टि देखी निर्धोखो ॥

सुख दुख कर्म - विपाक थिक
रोपिअ से काटिअ महज ।
श्रुति कह राम स्वतन्त्र छथि
कर्ता दुखहर्ता सहज ॥



चर्चित चरित्र-पात्रक नाम-संकेत

राम—मर्यादापुरुषोत्तम, रामायणक मुख्य नायक, इष्टदेव

सीता—रामजाया जानकी, रामायणक केन्द्रबिन्दु, इष्टदेवी

लक्ष्मण—रामक अनुज मेघनादसंहर्ता प्रसिद्ध रामायणी वीर

शिव—त्रिदेवमे अन्यतम महादेव, हनुमानक अवतारबीज

विष्णु—त्रिदेवक पालनकर्ता पुराणपुरुष

कार्तिकेय—देवसेनापति शिव-गौरीक पुत्र षडानन

परशुराम—अंशावतार; २१ बेर क्षत्रियकुलसंहर्ता, भृगुवंशी

कृष्ण—पूर्णावतार, कंसध्वंसी, गीतागायक

अर्जुन—महाभारतक मध्यम पांडव कपिध्वज कृष्णसखा

भीष्म-द्रोण—महाभारत युद्धक कौरवपक्षीय सेनापति, पितामह, एवं गुरु

अंजनी—हनुमानजीक जननी, केसरीक पत्नी

इन्द्र—देवताक अधिपति, वज्रधर पूर्वदिक्पति

रावण-कुम्भकर्ण—रामायणक प्रतिनायक, युगल राक्षस बन्धु

मेघनाद-अक्षयकुमार—रावणक दूहू योद्धा पुत्र

अंकम्पन सुबाहु-मारीच—रावणक सहायक प्रमुख असुरगण

सुरसा—सर्पमाता, हनुमानक बलक परीक्षिका

सिंहिका—छायाग्राहिणी मायाविनी हनुमानक मार्गरोधिका

श्रीलंका— लंकाक अधिष्ठात्री रक्षिका

ताड़का—सुबाहु मारीचक माय जे श्रीराम द्वारा मारलि गेलि

जाम्बवंत--रामायणक ऋक्षपति, हनुमानक प्रोत्साहनकर्ता

कंस, पूतना—भागवतक प्रसिद्ध कृष्णविद्वेषी पात्र, कृष्णसँ हत

प्रासङ्गिक स्थान ओ वस्तुक संकेत

द्रोण—पर्वत, उत्तरमे स्थित, औषधिक प्रमुख स्थल

सुबेल—दक्षिणमे समुद्रक तटवर्ती पहाड़ी

कल्पवृक्ष—देवतरु, जकर छायातर इच्छानुकूल पदार्थ प्राप्त होइछ

कच्छप—पुराण प्रसिद्ध धराक आश्रय, कमठपीठ

कलियुग--सत्ययुग त्रेता द्वापर ओ कलियुग (अन्तिमयुग)

माया--दिव्य शक्ति, अहंकार-ममकार जकरासँ आच्छन्न आत्मा जीव कहबैछ।

जीव--मायासँ आच्छन्न चिदंश

सुमन प्रकाशन

कतिपय प्रकाशित काव्य-रचना

१	अर्चना	१.२५	१४	अन्योक्तिका	१.००
२	प्रतिपदा	२.००	१५	मुक्तावली	०.५०
३	माघोन भादव	१.२५	१६	प्रकीर्ण शतक	१.००
४	पयस्विनी	३.००	१७	शृङ्गारहार	१.००
५	अङ्कावली	१.५०	१८	भारतवन्दना	०.५०
६	अनुगीताञ्जलि	२.००	१९	शिवमहिमा	०.४०
७	सनेस	०.५०	२०	आनन्द लहरी	०.३५
८	शृङ्गार तिलक	०.२५	२१	ललना-लहरी	०.५०
९	चण्डी चर्या	०.५०	२२	शक्ति स्तवक	०.७५
१०	ऋतुशृङ्गार	१.२५	२३	हरि स्मरणिका	०.३५
११	'पुत्रोऽहं पृथिव्याः'	०.७५	२४	कवि-नवतिका	१.२५
१२	कथा-यूथिका	१.२५	२५	हितोपदेशिका	०.५०
१३	प्रकृति-शतक	१.००	२६	जतरा चारूधाम	१.००
२७	अन्तर्नाद	१.५०	२८	गाम घरती	....
२९	सौन्दर्य-लहरी	२.००	३०	हनुमानबाहुक	२.००

सम्पादितग्रन्थ

पुरुष-परीक्षा (मै० अनुवाद सहित)	५.००
रघुवंश (द्वि० सर्ग, सानुवाद)	.६५
कृष्णजन्म (निबंधकाव्य : मनबोध)	१.००
आनन्द विजय (नाटिका : रामदास)	०.७५
पारिजातहरण (नाटक : उमापति)	०.७५

मैथिली मन्दिर : राजकुमारगंज : दरभंगा।

Cover Printed by Tapan Press, Patna 4.



मिथिला रिसर्च सोसाइटी

लहेरियासराय, दरभंगा

देसिल बयना सब जन मिट्ठा
ते तैसन जम्पओ अवहट्ठा

(Mahakavi Vidyapati)

Mithila Research Society has undertaken initiative of digitalization of rare and classical literary and research works in Maithili for readers and researchers. This is purely an attempt to preserve and popularize great works in Maithili for present and future generations to know their rich literary treasures. Art and literature shape a civilization. Mithila a cradle of learning has a glorious literary tradition right from Jyotirishwar Thakur and Mahakavi Vidyapati (medieval age) to Chanda Jha (pre independence era) to modern age represented by legends like Pandit Surendra Jha Suman and Pandit Chandranath Mishra Amar. Acclaimed Maithili author and researcher Dr Ramdeo Jha has been kind enough to allow access to his rich personal library for digitalization.

There is an exhaustive list of author, poet, playwright, critic and likes who chiseled Maithili literature into a great mosaic. Contribution of legends like Abhinav Vidyapati Bhavpritanand Ojha, Pandit Surendra Jha Suman, Kashikant Mishra Madhup, Kanchinath Jha 'Kiran', Ramcharitra Pandey 'Anu', Radhakrishna 'Baher', Yadunath Jha 'Yaduvar', Chhedi Jha 'Madhup', Pulkit Laldas 'Madhur', Deenbandhu Jha, Janardan Jha 'Jansidan', Murlidhar Jha, Jeevan Jha, Kavivar Sitaram Jha, Upendranath Jha' Vyas' Mahamahopadhyaya Umesh Mishra, Harinandan Thakur 'Saroj', Jagdishwari Prasad Ojha, Umapati Tiwari, Mahamahopadhyaya Madhusudan Ojha, Dr Sir Ganganath Jha, Mahamahopadhyaya Parmeshwar Jha, Mahamahopadhyaya Mukund Jha Bakshi, Ayodhyay Prasad Khatri, Nayayacharya Anand Jha, Umanath Jha, Tantranath Jha, Munshi Raghunandan Das, Ramdeo Srivastava, Sahdeo Srivastava, Bindeshwar Mandal, Jagdish Prasad Karna, Girindra Mohan Mishra, Brajnandan Thakur, Kalikumar Das, Subhadra Jha, Harimohan Jha,

Babu Bholalal Das, Dinanath Pathak, 'Bandhu', Shailendra Mohan Jha, Babuaji Jha Ajnat, Ramanath Jha, Fazul Rahman Hashmi, Ishnath Jha, Mayanand Mishra, Chandrabhanu Singh, RC Prasad Singh, Ramdeo Bhabuk, Dr Ramdeo Jha, Jaikant Mishra, Krishnakant Mishra, Pandit Chandranath Mishra Amar, Pandit Govind Jha, Dr. Ramdeo Jha, Ramkishore Jha 'Vibhakar', Dr Ratneshwar Mishra, Ravindranath Thakur, and other can't be forgotten. They dedicated their life to enrich Maithili literature with their outstanding literary creations. Many died unsung despite producing some of the best literary works and sadly they were forgotten. They selflessly devoted their life to serve Mithila and Maithili and bestowed upon us a rich heritage.

It was widely felt that books in Maithili are not widely available despite their huge demand by readers. Even outstanding literary works became rare due to lack of reprint.

Mithila Research Society is trying to bridge the gap by collecting and converting them in digital form. Mithila Research Society clarifies that this is purely a non-commercial undertaking hence any commercial use of the books is prohibited.

Mithila Research Society was established in 1905 by great poet Chanda Jha along with others. The organization was named as (Mithila Tatva Vimarshini (Mithila Research Society) to promote and preserve culture and literature of Mithila and Maithili besides promotion of teaching and learning of Sanskrit and Maithili, research and printing of popular texts of Mithila, research and publication of books related to history of Mithila

Pandit Chetnath Jha, Babu KC Mishra, Mukund Jha Bakshi, Pandit Gannath Jha, Munshi Raghunandan Das and Babu Tulapati Singh were on forefront along with Chanda Jha. Mahamahopadhyaya Parmeshwar Jha had written history of Mithila named as Mithila Tatva Vimarsha on request of Mithila Research Society. But the organization despite abundance of energy an dedication and hundreds of scholars deeply involved with the activity of the association could not flourish due to lack of desired support from society to an extent that people started calling Mithila Research Society as Murda Club; a dead organisation. That was a huge loss for Mithila.

But this was revived around year 1965 by Dr Ramdeo Jha under guidance of his senior Shailendra Mohan Jha. So far by the mid of year 2018 Mithila Research Society published over 150 books of Maithili literature and regularly undertakes activities for promotion of Maithili. Dr Ramdeo Jha is heading this institution assisted by Shankardeo Jha.

Vijay Deo Jha
9470369195, 8877213104 vijaydeojha@gmail.com

॥ श्री ॥



॥ बिज्ञापन ॥



मिथिलारिसर्चसोसाइटी

सम्यगुद्योगशीलस्य सहायः स्वयमीश्वरः।

१ दरभङ्गामें एक सभा 'मिथिला रिसर्च सोसाइटी' (मिथिला तत्व विमर्षिणी) नामक लग भग डेढ़ वर्ष सँ अछि। (१) संस्कृत विद्याक पठन पाठन बढ़ायब; (२) मैथिल वा अन्यकृत ग्रन्थ जे मिथिलामें प्रचलित अछि तेकर अन्वेषण ओ मुद्रित करब; मिथिला देश ओ मैथिल विद्वान् ओ अन्य विशिष्ट लोकनिक यथार्थ इतिहास लिखब; (४) मिथिलाक ऐतिहासिक स्थान ओ वस्तुसभक अन्वेषण ओ यथा साध्य जीर्णोद्धारक चेष्टा करब, (५) देशाचारानुसार आओर आओरो विषयक उन्नति करब, उक्तसभाक उद्देश्य छैक। एकर निर्वाह सकल साधारणक सहाय व्यतिरेक सम्भव नहिं। रिसर्च सोसाईटीक प्रार्थना जे मैथिलभ्रातृगण स्वोन्नतिमें प्रवृत्त होथि, परस्पर सहायता करथि, उपसभा नियुक्त कय रिसर्च सोसाइटीक साहिय करथि।

२ एहि वर्ष इहो विचार भेलअछिजे एहिं सभाक द्वारा निरीक्षण पूर्वक प्राचीन दुर्लभपुस्तक मुद्रित कयलजाय। एक दुइ व्यक्ति अपना अपना द्रव्यसँ पुस्तक छपयवापर उद्यतछथि। ओ एहिसभाक द्वारा छपाओलजायत। परन्तु एक दुइ व्यक्तिक साध्य एहनभारी कार्य नहिं, एकर तीनि उपाय छैक—

(१) श्रीमान् लोकनि द्रव्यक सहायता करथि, ताहि द्रव्यें उक्तसभाक द्वारा पुस्तक छपाओलजाय, एहि पुस्तक पर स्वत्व मिथिला रिसर्च सोसाइटीक रहैक पुस्तक विक्रय हो, तल्लब्ध द्रव्य मिथिला देशक उपकारार्थ व्यय हो। (२) अथवा श्रीमान् लोकनि अपना द्रव्यें एहि सभाक द्वारा पुस्तक छपावथि, सभाक दिशसँ प्राचीन दुर्लभ पुस्तक एकत्र कयल जाय, गृहीत पुस्तकक प्रूफ देखल जाय ओ मुद्रण कयल जाय। एहि परिश्रमक बदलामें दशांश मुद्रित पुस्तक अथवा उचित द्रव्य एहि सोसाइटीकें उक्त श्रीमान देथिन्ह। (३) अथवा जे कोनो पुस्तक रिसर्च सोसाइटीक दिशसँ छपय तकर ग्राहकरूपें उक्त सोसाइटीक सहायता श्रीमान् लोकनि करथि, समुचित द्रव्य दय पुस्तक खरीद करथि।

३ रिसर्च सोसाइटीक संरक्षक विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत महाराजाधिराज श्रीमान् मिथिलेश तथा श्रीमान् बाबू शारदाचरण मित्र जज कलकत्ता हाइकोर्ट,—छथि। ओ दरभङ्गाक कलेक्टर साहबसँ प्रार्थना कयलगेल अछि जे ओ सभापति होथि। बाबू श्रीतुलापतिसिंह, बाबू श्री विन्ध्यनाथ झा बी० ए०, बाबू श्री गङ्गानाथझा ऐम० ए०, बाबू श्री विन्ध्येश्वरीप्रसादसिंहजी, श्री काली बाबू डाक्टर, महामहोपाध्याय पं० श्री चित्रधर मिश्र, कवीश्वर पण्डित श्रीचन्द्र झा, वैयाकरण केसरी पं० श्री परमेश्वर झा इत्यादि सभासदगणमें सँ छथि।

४ रिसर्च सोसाइटीक मेम्बर हयबाक निमित्त फीस एक रुपैया नियत कयलगेल अछि।

५ उक्त विषय सम्बन्धमें जाहि महाशय कें पत्राचार करबाक होइन्ह से निम्न लिखित सेक्रेटरी सँ करथि।

दरभङ्गा
अगस्त १९०६

श्री केशी मिश्र बी० ए०
सेक्रेटरी मिथिलारिसर्चसोसाइटी
दरभंगा।